माननीय पटना उच्च न्यायालय की अधिकारिता में

आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 826/2014

थाना कांड संख्या -5 वर्ष-2006 थाना-सी. बी. आई. वाद जिला-पटना

==========

श्री चंद्र मोहन चौधरी, पिता स्वर्गीय अवध बिहारी चौधरी, निवासी 4 सी लक्ष्मी आश्रम अपार्टमेंट, नालंदा कॉलोनी, खजपुरा, थाना- राजीव नगर, पटना-14।

.... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम्

1. सतर्कता जांच ब्यूरो, बिहार सरकार, पटना
2. महानंद प्रसाद यादव, पिता स्वर्गीय सुखदेव यादव, गाँव-भागवतपुर, थाना- चटपुर, जिला- सुपौल

....प्रतिवादी/प्रतिवादीगण

==========

के साथ

आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 834/2014

थाना कांड संख्या- 5 वर्ष-2006 थाना-सी. बी. आई. वाद जिला-पटना

==========

श्री मुंद्रीका चौधरी, पिता स्वर्गीय मुनेश्वर चौधरी, निवास कृषि नगर, पो०- आशियाना नगर, थाना- शास्त्री नगर, जिला-पटना-25

.... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम्

1. सतर्कता जांच ब्यूरो, बिहार सरकार, पटना
2. महानंद प्रसाद यादव, पिता स्वर्गीय सुखदेव यादव गाँव-भागवतपुर, थाना- चटपुर, जिला- सुपौल।

....प्रतिवादी/प्रतिवादीगण

==========

उपस्थितिः

(आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 826/2014 में)

याचिकाकर्ता के लिए : श्री राम किशोर सिंह, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी/ओं के अधिवक्ता : श्री अरविंद कुमार, विशेष लोक अभियोजक, सतर्कता

(आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 834/2014 में)

याचिकाकर्ता के लिए : श्री अमित कुमार सिंह, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी/ओं के अधिवक्ता : श्री अरविंद कुमार, विशेष लोक अभियोजक, सतर्कता

==========

दंड प्रक्रिया संहिता --- धारा 164, 239, 240 --- भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 --- धारा 3(1)(डी), 7, 13(2) और 13(1)(डी) --- भारतीय दंड संहिता --- धारा 409, 120बी और 109 --- सतर्कता मामले में आरोपी याचिकाकर्ताओं द्वारा दाखिल डिस्चार्ज याचिका को खारिज करने के आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण याचिका --- दलील है कि याचिकाकर्ताओं को केवल सीआरपीसी की धारा 164 के तहत दर्ज सह-अभियुक्तों द्वारा किए गए एक दोषमुक्ति बयान के आधार पर सतर्कता मामले में फंसाया गया था, जो स्वीकार्य नहीं है --- आगे तर्क है कि जांच एजेंसी द्वारा कोई सबूत एकत्र नहीं किया गया था कि इंद्रा आवास योजना में निधि जारी करने के लिए याचिकाकर्ताओं द्वारा कभी भी सूचनादाता या किसी अन्य गवाह से अवैध रिश्वत का अनुरोध किया गया था।

निर्णय: सीआरपीसी की धारा 239 और 240 के स्तर पर एकमात्र विचार यह है कि क्या आरोप/आरोप पत्र निराधार है---आरोप लगाने वाले के अलावा कुछ अन्य व्यक्तियों को शामिल करने वाले दोषमुक्ति बयान को साक्ष्य के रूप में नहीं माना जा सकता---विद्वान मजिस्ट्रेट संदेह को समाप्त करते हुए सह-आरोपी का 164 सीआरपीसी बयान दर्ज करने में विफल रहे कि क्या बयान सह-आरोपी द्वारा किसी प्रलोभन, अनुचित प्रभाव, धमकी या जबरदस्ती से मुक्त होकर दिया गया था---इसके अलावा, बयान सीआरपीसी की धारा 164 के तहत आवश्यक प्रमाणीकरण नहीं रखता है, जिसे विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा लिखा जाना आवश्यक है---केवल सीआरपीसी की धारा 164 के तहत दर्ज सह-आरोपी के बयान के आधार पर, किसी भी अपराध के किए जाने के संबंध में प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है और यह आरोप को निराधार बनाता है ---पुनरीक्षण आवेदन स्वीकार किए जाते हैं। (पैरा 1, 4, 13, 28, 36, 37)

(2023) 6 एससीसी 768 **.....पर भरोसा किया गया।**

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय /आदेश

==========

कोरमःमाननीय श्री जस्टिस बाइबेक चौधरी सी. ए. वी. निर्णय

तारीखः10-04-2024

1. दोनों आपराधिक संशोधनों को 14 अगस्त, 2014 के एक आदेश के खिलाफ दायर किया गया है, जो विशेष न्यायाधीश, सतर्कता, पटना द्वारा 2006 के विशेष वाद संख्या 1 में पारित किया गया था। 2006 के सतर्कता थाना कांड संख्या 5 से उत्पन्न हुआ, जिसके तहत उपरोक्त याचिकाकर्ताओं द्वारा द०प्र०स० की धारा 239 के तहत दायर याचिकाओं को खारिज कर दिया गया था।

2. शुरुआत में, 2006 के सतर्कता थाना कांड संख्या 05 के निम्नलिखित तथ्यों को दर्ज करना आवश्यक है।

16 जनवरी, 2006 को, उधमपुर ग्राम पंचायत, जिला-सुपौल के मुखिया महानंद प्रसाद यादव ने अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक, निगरानी अन्वेषण ब्यूरो (VIB), पटना (इसके बाद "VIB" के रूप में वर्णित) के समक्ष एक शिकायत दर्ज कराई, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ आरोप लगाया गया कि उप विकास आयुक्त, सुपौल के कार्यालय से जुड़े कार्यालय क्लर्क, बचनेश्वर झा और चंद्रहास वर्मा ने इंदिरा आवास योजना के तहत घरों के निर्माण के लिए उनकी पंचायत को धन आवंटित करने के लिए उपर्युक्त शिकायतकर्ता से प्रति घर 1,000/- रुपये की मांग की। सूचक द्वारा बताया गया था कि उनके पंचायत क्षेत्र में 339 लाभार्थी थे, जो इंदिरा आवास योजना के तहत आर्थिक सहायता पाने के हकदार थे। उनके नाम पंचायत कार्यालय से उप विकास आयुक्त, सुपौल को स्वीकृति की अनुशंसा के लिए भेज दिए गए थे। सूचक द्वारा आरोप लगाया गया था कि उपर्युक्त नामित इंदिरा आवास योजना के तहत धनराशि मंजूर करने के लिए व्यक्तियों ने 1,000/- रुपये प्रति घर की दर से 3,39,000/- रुपये की मांग की थी। सूचक ने आगे आरोप लगाया है कि जिन पंचायतों ने रिश्वत के पैसे का भुगतान किया, उन्हें 25,000/- प्रति घर की दर से मंजूरी दी गई और चूंकि

उन्होंने उक्त रिश्वत के पैसे का भुगतान नहीं किया, इसलिए उनके पंचायत क्षेत्र के संबंध में राशि जारी नहीं की गई। उपरोक्त व्यक्तियों ने सूचक को बताया कि रिश्वत के पैसे का वितरण उप विकास आयुक्त, निदेशक, डीआरडीए और जिला मजिस्ट्रेट के बीच किया जाएगा और उसके बाद शेष राशि उनके बीच वितरित की जाएगी। शिकायत को लालबहादुर सिंह, इंस्पेक्टर, कैबिनेट, निगरानी द्वारा विधिवत सत्यापित किया गया और सत्यापन रिपोर्ट प्राप्त होने पर, 27 जनवरी, 2006 को बचनेश्वर झा के खिलाफ निगरानी पी.एस. केस संख्या 5/2006 के रूप में एक प्राथमिकी दर्ज की गई।

शिकायत की सत्यता का पता लगाने के लिए वीआईबी के अधिकारियों ने प्री-ट्रैप मेमोरेंडम तैयार किया। प्री-ट्रैप मेमोरेंडम के अनुसार 28 जनवरी, 2006 को डीआरडीए, सुपौल के कार्यालय में छापेमारी की गई। आरोपी बचनेश्वर झा को 35,000 रुपये की रिश्वत लेते रंगे हाथों पकड़ा गया। रिश्वत की रकम उसके पैंट की दाहिनी जेब से बरामद की गई। उक्त रकम के अलावा 5,180 रुपये की रकम भी बरामद की गई। उसकी कमीज की बायीं जेब से बरामद हुआ। डीआरडीए, सुपौल के कार्यालय में रखे विभिन्न अलमारियों की तलाशी ली गई और कुल 9,11,378.70 रुपये बरामद हुए। उक्त पैसे लिफाफों में रखे गए थे और लिफाफों पर "डीडीसी", "निदेशक, डीआरडीए" और "अध्यक्ष, बिहार बोर्ड" लिखा था। आरोपी बचनेश्वर झा और प्रभाकर लाल दास, जो उक्त कार्यालय में नाजिर के पद पर तैनात थे, अलग-अलग लिफाफों या जेबों में इतनी रकम रखने का उचित स्पष्टीकरण देने में विफल रहे। इसलिए, छापेमारी दल का नेतृत्व करने वाले अधिकारी द्वारा लिफाफों सहित पैसे को उचित जब्ती सूची के तहत अवैध रिश्वत से प्राप्त पैसे के रूप में जब्त कर लिया गया। आरोपी बचनेश्वर झा को गिरफ्तार कर लिया गया और 4 फरवरी, 2006 को क्षेत्राधिकारी मजिस्ट्रेट द्वारा सीआरपीसी की धारा 164 के तहत उनका बयान दर्ज किया गया। उसी दिन, दोनों पुनरीक्षणों में वर्तमान याचिकाकर्ताओं को आरोपी बचनेश्वर झा के बयान के आधार पर गिरफ्तार कर लिया गया। हालांकि याचिकाकर्ताओं का नाम एफआईआर में नहीं था। दोनों याचिकाकर्ताओं के सुपौल स्थित सरकारी आवासों की तलाशी ली गई। जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ताओं के बैंक खातों की जांच की, लेकिन जांच अधिकारियों को उनके ज्ञात

आय स्रोतों से अधिक संपत्ति का कोई सबूत नहीं मिला। याचिकाकर्ताओं के खिलाफ कोई सबूत न होने के बावजूद, जांच अधिकारी ने याचिकाकर्ताओं के खिलाफ कोई सबूत नहीं होने पर भी, जांच अधिकारी को मामले की जांच करने का निर्देश दिया।एजेंसी ने 28 मार्च, 2006 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) और 13(1)(डी) के तहत याचिकाकर्ताओं के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया। ट्रायल कोर्ट ने आरोप पत्र दायर आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ आईपीसी की धारा 409, 120 बी और 109 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) के साथ धारा 13(1)(डी) के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया।

11 फरवरी, 2010 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ताओं और निदेशक, डीआरडीए को विशेष न्यायाधीश, सतर्कता, पटना द्वारा सीआरपीसी की धारा 239 के तहत आरोपमुक्त कर दिया गया। अन्य अभियुक्तों के संबंध में, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7, 13 (2) और 13 (1) (डी) के साथ आईपीसी की धारा 409, 120 बी और 109 के तहत आरोप तय किए गए।

राज्य ने वीआईबी के माध्यम से याचिकाकर्ताओं और निदेशक, डीआरडीए को 11 फरवरी, 2010 को जारी किए गए आरोप मुक्त करने के आदेश को चुनौती दी थी, जिसे इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने 31 जुलाई, 2013 के आदेश के तहत रद्द कर दिया था और याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर आरोप मुक्त करने की याचिका पर कानून के अनुसार नए सिरे से निर्णय लेने के लिए मामला वापस ट्रायल कोर्ट को भेज दिया था। इसके बाद, 14 अगस्त, 2014 को विवादित आदेश पारित करते हुए, विद्वान विशेष न्यायाधीश सतर्कता, पटना ने याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर आवेदनों को खारिज कर दिया, जिसमें उन्हें मामले से मुक्त कर दिया गया।

इस बीच, याचिकाकर्ताओं ने इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा 31 जुलाई, 2013 को पारित आदेश को चुनौती दी, जिसमें तत्काल पुनरीक्षण की अनुमति दी गई और 11 फरवरी, 2010 के आदेश को खारिज कर दिया गया, इसे उन्होंने सीआर अपील संख्या 377/2024 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी। 23 जनवरी, 2024 के आदेश द्वारा, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने

आरोपित निर्णय को अलग रखने और तत्काल पुनरीक्षण आवेदनों को बहाल करने की कृपा की और इस न्यायालय को पुनरीक्षण आवेदन के अंतिम निपटान के लिए एक तारीख तय करने और कानून के अनुसार पुनरीक्षण आवेदनों पर निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ने का निर्देश दिया।

3. अतः माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दिनांक 21 मार्च, 2014 के निर्देशानुसार दोनों पुनरीक्षण याचिकाओं पर पुनः सुनवाई की गई।

4. दोनों पुनरीक्षणों में याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने शुरू में यह दलील दी कि याचिकाकर्ताओं को सतर्कता पी.एस. मामला संख्या 05/2008 के संबंध में केवल आरोपी बचनेश्वर झा द्वारा सीआरपीसी की धारा 164 के तहत दर्ज किए गए इकबालिया बयान के आधार पर फंसाया गया था।

5. याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया है कि एक अभियुक्त का बयान सीआरपीसी की धारा 164 के तहत अपने बयान में कुछ अन्य व्यक्तियों को शामिल करना उक्त व्यक्तियों के खिलाफ स्वीकार्य नहीं है। दूसरे शब्दों में, सीआरपीसी की धारा 164 के तहत आरोपी द्वारा दिया गया दोषपूर्ण बयान, इकबालिया बयान देने वाले आरोपी के खिलाफ अपराध माना जा सकता है और एफआईआर में नामित नहीं किए गए कुछ अन्य व्यक्तियों को शामिल करते हुए उसके द्वारा दिया गया दोषमुक्ति बयान उक्त तीसरे व्यक्ति के खिलाफ स्वीकार्य नहीं है और आरोपी बचनेश्वर झा द्वारा दिए गए इकबालिया बयान के आधार पर याचिकाकर्ताओं को आईपीसी के तहत आपराधिक विश्वासघात और अपराध के उपशमन के सामान्य प्रावधानों के साथ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत आपराधिक मामले में नहीं फंसाया जा सकता है। अपनी दलील के समर्थन में याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने सबसे पहले पकाला नारायण स्वामी बनाम के मामले में प्रिवी काउंसिल के फैसले का हवाला दिया। किंग-एम्परर ने एआईआर 1939 पीसी 47 में रिपोर्ट की, जिसमें यह माना गया कि एक बयान को स्वीकारोक्ति होने के लिए अपराध की शर्तों को स्वीकार करना चाहिए, या किसी भी दर पर उन सभी तथ्यों को स्वीकार करना चाहिए जो अपराध का गठन करते हैं।

गंभीर रूप से दोषपूर्ण तथ्य की स्वीकृति, भले ही निर्णायक रूप से दोषपूर्ण तथ्य हो, अपने आप में स्वीकारोक्ति नहीं है; न ही दोषमुक्ति संबंधी बात वाला बयान स्वीकारोक्ति हो सकता है; यदि दोषमुक्ति कथन किसी ऐसे तथ्य का है, जो यदि सत्य है, तो कथित अपराध को नकारता है उक्त व्यक्तियों के खिलाफ द०प्र०स० की धारा 164 के तहत अपने बयान में कुछ अन्य व्यक्तियों को शामिल करना स्वीकार्य नहीं है। दूसरे शब्दों में द०प्र०स० की धारा 164 के तहत दिए गए अभियुक्त के अपमान करने वाले बयान को अपराध के रूप में माना जा सकता है क्योंकि अभियुक्त के खिलाफ स्वीकारोक्ति और उसके द्वारा दिए गए दंडात्मक बयान में कुछ अन्य व्यक्तियों को शामिल किया गया है, जिनका नाम एफ. आई. आर. में नहीं है, उक्त तीसरे व्यक्ति के खिलाफ स्वीकार्य नहीं है और याचिकाकर्ताओं को अभियुक्त बचनेश्वर झा द्वारा दिए गए इकबालिया बयान के आधार पर भ०द०वि० के तहत आपराधिक विश्वासघात और अपराध को कम करने के सामान्य प्रावधानों के साथ पढ़ने वाले भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत आपराधिक मामले में फंसाया नहीं जा सकता है। अपने निवेदन के समर्थन में, याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता सबसे पहले **पाकला नारायण स्वामी बनाम किंग इम्पेरोर ए. आई. आर. 1939 पी. सी. 47** के मामले में प्रिवी काउंसल के फैसले का उल्लेख करते हैं, जिसमें यह था अभिनिर्धारित किया कि एक बयान को स्वीकारोक्ति होने के लिए अपराध के संदर्भ में, या किसी भी तरह से उन सभी तथ्यों को स्वीकार करना चाहिए जो अपराध का गठन करते हैं। गंभीर रूप से दोषारोपण करने वाले तथ्य को स्वीकार करना, भले ही निर्णायक रूप से दोषारोपण करने वाला तथ्य हो, अपने आप में एक स्वीकारोक्ति नहीं है; और न ही छूट देने वाले मामले वाला बयान एक स्वीकारोक्ति हो सकता है; यदि छूट देने वाला बयान किसी तथ्य का है, जो यदि सच है, तो कथित अपराध को नकारात्मक कर देगा।

कबूल किया.

6. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया है कि सीआरपीसी की धारा 164 के तहत बयान देकर, आरोपी बचनेश्वर झा ने शिकायत किए गए अपराध के संबंध में खुद को

निर्दोष साबित करने की कोशिश की और याचिकाकर्ताओं पर अपराध के अपराधियों के रूप में जिम्मेदारी डालने की कोशिश की।

7. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने **डॉ. जितेन्द्र गुप्ता बनाम बिहार राज्य** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए आगे कहा कि **सतर्कता जांच ब्यूरो, पटना** के माध्यम से **2016 (4) पीएलजेआर 894** में रिपोर्ट की गई, कि सह-अभियुक्तों के कबूलनामे को याचिकाकर्ताओं के खिलाफ सख्त अर्थों में ठोस सबूत के रूप में नहीं माना जा सकता है और इसे याचिकाकर्ताओं की सजा का आधार नहीं बनाया जा सकता है। इसी बिंदु पर, वह **कश्मीरा सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का भी हवाला देते हैं, जिसकी रिपोर्ट **एआईआर 1952 एससी 59** में दी गई है।

8. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि जांच एजेंसी ने आरोपी व्यक्तियों/याचिकाकर्ताओं को करेंसी नोटों से भरे लिफाफों की बरामदगी से जोड़ने का प्रयास किया और जब्त लिफाफों पर "डीडीसी" और "निदेशक, डीआरडीए" लिखा हुआ था। याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने दलील दी कि करेंसी नोटों के साथ उक्त लिफाफों की बरामदगी और उन पर "डीडीसी" और "निदेशक, डीआरडीए" लिखा होना याचिकाकर्ताओं पर अपराध का आरोप नहीं लगाता है।

9. सबसे पहले, उक्त लिफाफे आरोपी व्यक्तियों के कब्जे से बरामद नहीं हुए थे। दूसरे, उक्त लिफाफों और करेंसी नोटों की बरामदगी से यह मानने के लिए कोई उचित संदेह नहीं होता कि कोई साजिश थी और याचिकाकर्ता ऐसी साजिश में भागीदार थे। यदि मुकदमे के दौरान यह साबित हो जाता है कि उक्त लिफाफे कार्यालय की अलमारियों से जब्त किए गए थे, तो ऐसा साक्ष्य साक्ष्य अधिनियम की धारा 21 के तहत आरोपी बचनेश्वर झा और चंद्रहास वर्मा के खिलाफ स्वीकार्य होगा, न कि याचिकाकर्ताओं के खिलाफ। वीआईबी जब्त लिफाफों के संबंध में याचिकाकर्ताओं के स्वामित्व को साबित करने के लिए किसी गवाह की जांच करने में भी विफल रही।

10. इस संदर्भ में, याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने **केंद्रीय जांच ब्यूरो बनाम वी.सी. शुक्ला एवं अन्य** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला दिया, जो **(1998) 3 एससीसी 410** में रिपोर्ट किया गया है।

11. यह उल्लेख करना उचित है कि उक्त रिपोर्ट में सीबीआई ने श्री वी.सी. शुक्ला और श्री एल.के. आडवाणी के खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत आरोप पत्र प्रस्तुत किया था। एस.के. जैन नामक व्यक्ति के घर से विभिन्न व्यक्तियों को किए गए भुगतान के विवरण से संबंधित कुछ डायरी, नोटबुक और फाइलें बरामद की गईं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि भले ही उक्त डायरी, नोटबुक और फाइलों में की गई प्रविष्टियां सत्य मानी जाएं, फिर भी वे प्रविष्टियां एल.के. आडवाणी और वी.सी. शुक्ला पर आरोप लगाने के लिए पर्याप्त नहीं होंगी, क्योंकि उनकी विश्वसनीयता साबित करने के लिए स्वतंत्र गवाहों की जांच नहीं की गई है।

12. इसी प्रकार, बचनेश्वर झा और चंद्रहास वर्मा की अलमारियों से करेंसी नोटों से भरे लिफाफों की बरामदगी को याचिकाकर्ताओं के खिलाफ इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।

13. याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी है कि सूचक ने याचिकाकर्ताओं के खिलाफ अपनी शिकायत में कोई आरोप नहीं लगाया है। उनका आरोप केवल आरोपी बचनेश्वर झा तक ही सीमित था। जांच एजेंसी द्वारा कोई साक्ष्य नहीं जुटाया गया है कि सूचक या किसी अन्य गवाह से कभी भी इंद्रा आवास योजना में निधि जारी करने के लिए अवैध रिश्वत मांगी गई थी। ट्रायल कोर्ट ने याचिकाकर्ताओं द्वारा बरी करने की प्रार्थना को खारिज करते समय उपरोक्त पहलू पर विचार नहीं किया।

14. याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं ने इस नियम की प्रयोज्यता के संबंध में शिकायतें उठाई हैं। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 3(1)(डी) और धारा 13(1)(डी) और 13(2) के साथ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 के तहत आरोप। **सी के दामोदरन नायर बनाम भारत सरकार** में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए, उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया है, **(1997) 9 एससीसी 477** में रिपोर्ट किया गया कि पी.सी. अधिनियम की धारा 5(2) के साथ

धारा 5(1)(डी) के तहत आरोप साबित करने के लिए, जो कि धारा 13(1)(डी के साथ समरूप है, अभियोजन पक्ष को यह साबित करना आवश्यक है कि अभियुक्त ने भ्रष्ट या अवैध तरीकों से या लोक सेवक के रूप में अपने पद का दुरुपयोग करके और वह भी अधिनियम की धारा 4(1) के तहत वैधानिक अनुमान की सहायता के बिना मूल्यवान चीज या आर्थिक लाभ प्राप्त किया।

15. मेरी राय में, विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए उपरोक्त मुद्दे पर, आरोप पर विचार करते समय निर्णय नहीं लिया जा सकता। आरोप तय होने के बाद सुनवाई के समय ही इसका निर्णय लिया जा सकता है, यदि याचिकाकर्ताओं के खिलाफ आरोप तय करने के लिए पर्याप्त आधार हो।

16. इसलिए, मेरा विचार है कि इस स्तर पर, इस प्रश्न पर कि क्या विवादित आदेश कानूनी, वैध और उचित है, तत्काल पुनरीक्षण के न्यायनिर्णयन के प्रयोजनार्थ, उपरोक्त मुद्दे पर विचार नहीं किया जा सकता है।

17. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील इस निष्कर्ष पर पहुंचे दलील दी गई कि जिन सामग्रियों, यानी आरोप-पत्र और केस डायरी के आधार पर विजिलेंस ने याचिकाकर्ताओं पर मुकदमा चलाने की मांग की है, भले ही उनका खंडन न किया गया हो या उन्हें समग्र रूप से स्वीकार कर लिया गया हो, वे याचिकाकर्ताओं के खिलाफ अपराध के लिए प्रथम दृष्टया कोई मामला नहीं बनाते हैं और वे याचिकाकर्ताओं को कठोर मुकदमे में डालने के लिए पर्याप्त नहीं हैं।

18. अपने तर्क के समर्थन में, वह माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का हवाला देते हैं, जिसमें **उत्तर प्रदेश राज्य सीबीआई बनाम डॉ. संजय सिंह एवं अन्य, 1994 सप (2) एससीसी 707** में रिपोर्ट किया गया और **दीपकभाई जगदीशभाई पटेल बनाम गुजरात राज्य, 2019 16 एससीसी 547** में रिपोर्ट किया गया।

19. Cr. संशोधन संख्या 826/2014 में प्रतिवादियों ने कोई जवाबी हलफनामा दाखिल नहीं किया। हालाँकि, Cr. संशोधन संख्या 834/2014 में प्रतिपक्षियों की ओर से 18 दिसंबर, 2014 को जवाबी हलफनामा दाखिल किया गया है।

20. जवाबी हलफनामे में, वी.आई.बी. ने सीआरपीसी की धारा 164 के तहत बचनेश्वर झा द्वारा दिए गए बयान और "डीडीसी" और "डीआरडीए के निदेशक" के नाम पर कुछ लिफाफों की बरामदगी पर भरोसा किया, जिनमें कुछ करेंसी नोट भी थे।

21. प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि डीडीसी, सुपौल के कार्यालय में एक रैकेट चल रहा था और आरोपी बचनेश्वर झा को इंदिरा आवास योजना के तहत विभिन्न ग्राम पंचायतों के मुखिया से 1,000 रुपये प्रति घर की दर से रिश्वत लेने का निर्देश दिया गया था।

22. उपर्युक्त सामग्री के अलावा, दोनों आपराधिक पुनरीक्षणों में याचिकाकर्ताओं के खिलाफ कुछ भी नहीं है।

23. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या जांच अधिकारी द्वारा एकत्रित की गई प्रथम दृष्टया सामग्री भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत उक्त मामले के संबंध में याचिकाकर्ताओं को फंसाने के लिए पर्याप्त है।

24. वीआईबी के विद्वान अधिवक्ता ने दलील दी कि इस मुद्दे पर कानून अच्छी तरह से स्थापित है कि संज्ञान लेने के समय, न्यायालय को अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए केवल साक्ष्यों का अध्ययन करना होता है। संज्ञान लेने के चरण में, न्यायालय को मामले के पक्ष और विपक्ष में कोई भटकावपूर्ण जांच नहीं करनी चाहिए और साक्ष्यों का मूल्यांकन इस तरह नहीं करना चाहिए जैसे कि वह कोई मुकदमा चला रहा हो।

25. विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया है कि रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री और केस डायरी पर उचित विचार करने पर, बिना किसी संदेह के यह पता लगाया जा सकता है कि आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ अपराधों के संबंध में रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करते हुए न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया था। इसलिए, आरोप को रिकॉर्ड पर प्रथम दृष्टया सामग्री के आधार पर तैयार किया जाना चाहिए था और ट्रायल कोर्ट आरोप पर विचार करने के समय साक्ष्य के वजन का पता लगाने की स्थिति में नहीं है।

26. यह न्यायालय विपक्षी पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण से पूरी तरह सहमत होने की स्थिति में नहीं है। जब अभियुक्त को अस्वीकार्य साक्ष्य के आधार पर फंसाया जाता है और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत उन्हें फंसाने के लिए कोई प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य साक्ष्य पेश नहीं किया जाता है, तो वे बरी किए जाने के हकदार हैं।

27. याचिकाकर्ता प्रासंगिक समय पर निदेशक, डीआरडीए और डीडीसी, सुपौल थे। उनके पास से कोई भी आपत्तिजनक सामग्री जब्त नहीं की गई। इस बात का कोई सबूत नहीं है कि उन्होंने इंदिरा आवास योजना के तहत पैसे के वितरण के बदले अपने अधिकार क्षेत्र में किसी पंचायत सदस्य से रिश्वत मांगी। याचिकाकर्ताओं के संबंध में कोई जाल नहीं चलाया गया। उनके भौतिक कब्जे से कोई भी दागी धन बरामद नहीं हुआ। केवल इसलिए कि कुछ लिफाफे मिले, जिन पर "डीडीसी" और "निदेशक, डीआरडीए" लिखा था, याचिकाकर्ताओं के खिलाफ आरोप तय करने के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं मानी जा सकती। इस तरह के निर्णय पर पहुंचने के लिए वी.सी. शुक्ला (सुप्रा) को ध्यान में रखा जा सकता है।

28. यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि धारा 239 सीआरपीसी के चरण में, न्यायालय को केवल प्रथम दृष्टया मामले को देखना होता है और धारा 239 सीआरपीसी के तहत अभियुक्त को बरी करने का दायित्व तब उत्पन्न होता है जब मजिस्ट्रेट अभियुक्त के खिलाफ आरोप को निराधार मानता है। 'निराधार' शब्द साक्ष्य में कोई आधार या आधार नहीं दर्शाता है और इस प्रकार, यह निर्धारित करने के लिए जो परीक्षण लागू किया जा सकता है कि क्या आरोप को निराधार माना जाना चाहिए, वह यह है कि जहां सामग्री ऐसी है कि अगर खंडन न भी किया जाए तो भी कोई मामला नहीं बनता है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लगातार यह माना जाता है कि सीआरपीसी की धारा 239 के तहत आवेदन पर विचार करने के चरण में सामग्री का कोई विस्तृत मूल्यांकन या संभावित बचाव पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता नहीं है। यह जांच एजेंसी द्वारा एकत्र की गई सामग्री को उचित संदेह से परे मामले के स्वर्णिम पैमाने पर तौलने का अभ्यास करने का चरण नहीं है। सीआरपीसी की धारा

239 और 240 के चरण में एकमात्र विचार। यह इस बात पर निर्भर करता है कि आरोप/आरोप-पत्र निराधार है या नहीं। यह सामग्री के निहितार्थों के पक्ष और विपक्ष को तौलने या अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत सामग्री की छानबीन करने का चरण नहीं होना चाहिए, क्योंकि इस चरण में अभ्यास पुलिस रिपोर्ट और दस्तावेजों पर विचार करने तक ही सीमित होना चाहिए ताकि यह तय किया जा सके कि आरोप निराधार है या नहीं। आरोपी के खिलाफ लगाए गए आरोप निराधार कहे जा सकते हैं।

29. मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत सामग्री पर आधारित एक बहुत मजबूत संदेह भी, जो उसे कथित अपराध के घटकों के तथ्यात्मक अस्तित्व के बारे में प्रकल्पित राय बनाने की ओर ले जाता है, उस अपराध के संबंध में अभियुक्त के खिलाफ आरोपों के निर्माण को उचित ठहरा सकता है, और संदेह मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत सामग्री पर आधारित होना चाहिए, जो उसे अपराध के घटकों के तथ्यात्मक अस्तित्व के बारे में प्रकल्पित राय बनाने की ओर ले जाता है।

30. **तमिलनाडु राज्य बनाम आर. सौंदिररासु एवं अन्य, (2023) 6 एससीसी 768** में रिपोर्ट किया गया कि उच्च न्यायालय द्वारा संशोधन में आरोप-पत्र दाखिल करने या आरोप-पत्र दाखिल करने की प्रार्थना को अस्वीकार करने के आदेश में हस्तक्षेप केवल अधिकार क्षेत्र की स्पष्ट त्रुटि को ठीक करने के लिए दुर्लभतम मामले में अनुमेय है और संशोधन शक्ति का प्रयोग आकस्मिक या यांत्रिक तरीके से नहीं किया जा सकता है और इसका प्रयोग केवल कानून या प्रक्रिया की स्पष्ट त्रुटि को ठीक करने के लिए किया जा सकता है जो यदि ठीक नहीं की जाती है तो अन्याय का कारण बनेगी। संशोधन शक्ति को अपीलीय शक्ति के बराबर नहीं माना जा सकता है और इस प्रकार, संशोधन न्यायालय रिकॉर्ड पर सामग्री की सावधानीपूर्वक जांच नहीं कर सकता है जैसा कि ट्रायल कोर्ट या द्वारा किया जाता है। अपीलीय न्यायालय। **आर. सौंदिररासु** (सुप्रा) के पैराग्राफ 62 से 64 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दिया है

> ***62.*** *धारा 239 सी.ई.पी.सी. में यह प्रावधान है कि यदि मजिस्ट्रेट को अभियुक्त के विरुद्ध आरोप निराधार लगता है, तो वह अभियुक्त को दोषमुक्त कर देगा। हमारी राय*

में, "निराधार" शब्द का अर्थ है कि यह मानने का कोई आधार नहीं होना चाहिए कि अभियुक्त ने अपराध किया है। धारा 239 सी.पी.पी.सी. में प्रयुक्त "निराधार" शब्द का अर्थ है कि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनाने के लिए पर्याप्त नहीं है।

63. *विद्वान लेखक श्री सरकार ने अपने क्रिमिनल पी.सी., 5 वें संस्करण, पृष्ठ 427 पर इस प्रकार राय व्यक्त की है:*

"यह प्रावधान धारा 227 के समान ही है, अंतर केवल इतना है कि मजिस्ट्रेट, यदि आवश्यक हो तो, धारा 245 के अंतर्गत भी अभियुक्त की जांच कर सकता है। मजिस्ट्रेट, कारण दर्ज करते हुए अभियुक्त को मुक्त कर देगा, यदि (i) पुलिस रिपोर्ट और धारा 173 में उल्लिखित दस्तावेजों पर विचार करने के बाद; (ii) यदि आवश्यक हो तो अभियुक्त की जांच करने के बाद और (iii) दोनों पक्षों की दलीलें सुनने के बाद उसे लगता है कि उसके खिलाफ आरोप निराधार हैं, यानी या तो कोई कानूनी सबूत नहीं है या तथ्यों से कोई अपराध साबित नहीं होता है।"

64. *संक्षेप में, इसका अर्थ यह है कि यदि किसी अपराध के संबंध में प्रथम दृष्टया कोई मामला नहीं बनता है, तो यह आरोप के बराबर होगा आधारहीन।"*

31. इस मामले में, याचिकाकर्ताओं को शुरू में आरोपमुक्त कर दिया गया था। इसके बाद, सीबीआई ने इस न्यायालय के समक्ष आपराधिक पुनरीक्षण याचिका दायर की। पुनरीक्षण आवेदन को स्वीकार कर लिया गया और मामले को वापस ट्रायल कोर्ट में भेज दिया गया ताकि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों पर विचार किया जा सके और इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि क्या भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के तहत आरोप तय करने के लिए वास्तव में कोई तत्व मौजूद थे।

32. माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित उक्त आदेशों के विरुद्ध, अभियुक्तों ने माननीय सर्वोच्च

न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति पर अपील दायर की। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपील स्वीकार कर ली तथा इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को इस आधार पर रद्द कर दिया कि पुनरीक्षण आवेदनों का निपटारा बिना कोई कारण बताए यंत्रवत् तथा लापरवाही से किया गया था।

33. मैंने पहले ही माना है कि आरोप पर विचार करने के चरण में, ट्रायल कोर्ट रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों की उसी तरह से जांच करने के लिए बाध्य नहीं है, जिस तरह से ट्रायल के दौरान जांच की जानी चाहिए। सामग्री का विस्तृत मूल्यांकन और सामग्री के सभी निहितार्थों के सभी पक्ष और विपक्ष पर विचार या सामग्री को छांटने के लिए ट्रायल कोर्ट द्वारा आरोप पर विचार करने के समय की आवश्यकता नहीं है। एक बहुत मजबूत मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत सामग्री पर आधारित संदेह, जो उसे अपराध के तथ्यात्मक तत्वों के बारे में अनुमानात्मक राय बनाने के लिए प्रेरित कर सकता है, अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त है।

34. इस सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए, आइए अब याचिकाकर्ताओं के खिलाफ आरोप तय करने के लिए विद्वान ट्रायल जज के समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री पर विचार करें। याचिकाकर्ताओं के खिलाफ अभियोजन पक्ष द्वारा जिस मुख्य साक्ष्य पर भरोसा किया गया, वह सीआरपीसी की धारा 164 के तहत दर्ज बचनेश्वर झा का बयान है। यह दर्ज करना अनावश्यक है कि इकबालिया बयान का एक दोषपूर्ण हिस्सा केवल बयान देने वाले के खिलाफ ही स्वीकार्य है।

35. **सुरिंदर कुमार खन्ना बनाम राजस्व खुफिया निदेशालय, (2018) 8 एससीसी 271** में रिपोर्ट किया गया, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि स्वीकारोक्ति को निस्संदेह सामान्य तरीके से साक्ष्य के रूप में माना जाना चाहिए, लेकिन एक आरोपी व्यक्ति के खिलाफ मामलों में, अदालत सह आरोपी व्यक्ति की स्वीकारोक्ति से शुरू नहीं कर सकती है; इसे अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत अन्य साक्ष्य से शुरू करना होगा और जब वह उक्त साक्ष्य की गुणवत्ता और प्रभाव के संबंध में अपनी राय बना ले, तब दोष के निष्कर्ष पर आश्वासन प्राप्त करने के लिए स्वीकारोक्ति की ओर मुड़ना स्वीकार्य है, जिस पर न्यायिक दिमाग उक्त अन्य साक्ष्य पर पहुंचने वाला है। अन्य मामलों में सह-आरोपी के

खिलाफ़, सीआरपीसी की धारा 164 के तहत बयान को ठोस सबूत नहीं माना जा सकता। यदि स्वतंत्र साक्ष्य के आधार पर अभियोजन पक्ष सह-आरोपी के खिलाफ़ आरोप साबित करने में सक्षम है, तो इसे पुष्टि की परिस्थिति के रूप में माना जा सकता है। इसलिए, सह-आरोपी का कबूलनामा दोषसिद्धि का एकमात्र आधार नहीं हो सकता है, न ही सबूत का ठोस टुकड़ा। इसके अलावा, निर्माता के अलावा कुछ अन्य व्यक्तियों को फंसाने वाले दोषमुक्ति बयान को सबूत के तौर पर नहीं माना जा सकता है।

36. वर्तमान मामले में, यदि सीआरपीसी की धारा 164 के तहत बचनेश्वर झा द्वारा दिए गए बयान पर गौर किया जाए, तो यह पाया जाएगा कि विद्वान मजिस्ट्रेट ने सीआरपीसी की धारा 164 के तहत बयान दर्ज करने के लिए आवश्यक आवश्यकताओं के अनुसार बयान दर्ज करने में विफल रहे। उक्त बयान को संदेह को दूर करने के लिए भी दर्ज नहीं किया गया था, कि क्या बयान उपरोक्त अभियुक्त द्वारा किसी प्रलोभन, अनुचित प्रभाव, धमकी या जबरदस्ती से मुक्त होकर दिया गया था। बयान सीआरपीसी की धारा 164 के तहत आवश्यक प्रमाणीकरण नहीं रखता है, जिसे विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा लिखा जाना आवश्यक है। इसलिए, उक्त बयान के प्रथम दृष्टया अवलोकन पर, इस बारे में उचित संदेह है कि क्या उक्त बयान सही है। बयान साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य होगा और यदि स्वीकार्य है तो उक्त बयान का इस्तेमाल याचिकाकर्ताओं के खिलाफ नहीं किया जा सकता।

37. सतर्कता जांच ब्यूरो ने कुछ लिफाफों पर भी भरोसा किया, जिन पर "डीडीसी" और "निदेशक, डीआरडीए" लिखे नोट थे। बेशक, याचिकाकर्ताओं के कब्जे से उक्त लिफाफे बरामद किए गए थे, लेकिन आरोपी बचनेश्वर झा के साक्ष्य के अलावा कोई स्वतंत्र साक्ष्य नहीं है कि याचिकाकर्ताओं को रिश्वत के पैसे का हिस्सा दिया गया था। याचिकाकर्ताओं के खिलाफ यह साक्ष्य स्वीकार्य नहीं है। जांच एजेंसी को याचिकाकर्ताओं के सुपौल और पटना स्थित आवास से कोई भी आपत्तिजनक सामग्री नहीं मिली। याचिकाकर्ताओं के खिलाफ आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्ति के संबंध में कोई मामला नहीं बनता है। इसलिए, केवल सह-अभियुक्तों के बयान के आधार पर, जो सीआरपीसी की धारा 165 के

तहत दर्ज किया गया है, किसी भी अपराध के बारे में कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है और यह आरोप निराधार है।

38. ऊपर बताए गए कारणों से, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि अभियोजन पक्ष आरोपी के खिलाफ प्रथम दृष्टया कोई मामला बनाने में विफल रहा है या यहां तक कि कोई सबूत भी स्थापित नहीं कर सका है। उनके खिलाफ संदेह का पर्याप्त आधार है ताकि आरोपियों के खिलाफ आरोप तय किया जा सके।

39. तदनुसार, दोनों संशोधन स्वीकृत किये जाते हैं।

40. याचिकाकर्ताओं को सतर्कता मामला संख्या 01/2006 और सतर्कता मामला संख्या 05/2006 से मुक्त किया जाता है।

41. इस आदेश की एक प्रति विद्वान विशेष न्यायाधीश, निगरानी, पटना को भेजी जाए।

(बिबेक चौधरी, न्यायमूर्ति)

एसकेएम/- उट्टम

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।